RESEARCH PAPER

RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
e-ISSN: 2455-3085 | Vol.06 | Iss.09 | September 2021 | pp. 108-111
Double-Blind Peer Reviewed/Refereed Journal

ग्रामीण नारी जीवन संदर्भ : 'पंचमी तत्पुरुष'

***लक्ष्मी देवी**

पीएच.डी. शोधार्थी, हिन्दी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू – 180006

Abstract

भारत में आज भी पारिवारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्तरों पर स्त्रियों की स्थिति पुरुषों की अपेक्षा हीन और कमजोर है। महिलाओं को सशक्त बनाने, उनकी क्षमताओं और कौशल का विकास करने हेतु विभिन्न योजनाएँ चलाई जा रही हैं। इन योजनाओं से शहरी महिलाएँ तो पूर्ण रूप से लाभान्वित हुई हैं। परन्तु आज भी अधिकांश ग्रामीण महिलाएँ निरक्षरता एवं जागरुकता की कमी के कारण परिवार और समाज में आर्थिक रूप से सपन्न महिलाओं के समक्ष उपेक्षा ही पा रही हैं। रामधारी सिंह दिवाकर के उपन्यास 'पंचमी तत्पुरुष' में ऐसी ही ग्रामीण नारी का चित्रण मिलता है। जिसे शहरी सुख–सुविधाओं से वंचित रखा जाता है। तथा उसे पति के द्वारा ही उसे ग्रामीण नारी कहकर धिक्कारा जाता है। महिलाएं, परिवार, समाज व देश की उन्नति की नींव हैं और नींव को सशक्त व मजबूत बनाये जाने पर ही सुदृढ़ विशाल एवं भव्य इमारत की कल्पना को साकार किया जा सकता है। ग्रामीण नारी की दुर्दशा का सबसे बड़ा कारण शिक्षा का अभाव है। नारी के लिए आवश्यक है कि वह समाज में अधिक–से–अधिक शिक्षित होकर और अपने अधिकारों के प्रति जागरुक होकर अपनी अस्मिता को बनाने में सक्षम हो तभी वह समाज में निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर होती हुई नज़र आएगी।

Keywords: *निरक्षरता, सशक्त, भव्य, सुदृढ़, सक्षम।*

Article Publication

Published Online: 15-Sep-2021

***Author's Correspondence**

लक्ष्मी देवी

पी पीएच.डी. शोधार्थी, हिन्दी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू – 180006

ldevi0234[at]gmail.com

10.31305/rrijm.2021.v06.i09.018

© 2021The Authors. Published by RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary. This is an open access article under the CC BY-NC-ND license (https://creativecommons.org/licenses/by-nc-nd/4.0/)

भारत में आज भी पारिवारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्तरों पर स्त्रियों की स्थिति पुरुषों की अपेक्षा हीन और कमज़ोर है। स्त्रियों और पुरुषों के बीच अंतराल को पाटने के लिए संविधान में महिलाओं को पुरुषों के समकक्ष मौलिक अधिकार प्रदान किये गये हैं। महिलाओं को सशक्त बनाने, उनकी क्षमताओं और कौशल का विकास करने हतु विभिन्न योजनाएँ चलाई जा रही हैं। इन योजनाओं से शहरी महिलाएँ तो पूर्ण रूप से लाभान्वित हुई हैं। आत्मनिर्भर महिलाएँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्वयं को पुरुषों के समक्ष साबित कर रही हैं, परन्तु आज भी अधिकांश ग्रामीण महिलाएँ निरक्षरता एवं जागरूकता की कमी के कारण परिवार और समाज में आर्थिक रूप से संपन्न महिलाओं के सामने उपेक्षा ही पा रही है। आज भी उनके साथ अपने ही परिवार में भेदभाव हो रहा है। इस भेदभाव का आंकलन शिक्षा, स्वास्थ व पोषण सभी स्तरों पर किया जा सकता है। रामधारी सिंह दिवाकर ग्रामीण जीवन पर लिखने वाले महत्वपूर्ण लेखक हैं। उनकी अधिकांश कहानियां और उपन्यास ग्रामीण जीवन को ही आधार बनाकर लिखे गए हैं।

'पंचमी तत्पुरुष' उपन्यास 1988 में प्रकाशित है। प्रस्तुत उपन्यास अहल्या की व्यथा–कथा के जरिए ग्रामीण स्त्रियों की तीन पीढ़ियों तथा उनकी विडम्बना भरी जिन्दगी का गहरा विश्लेषण प्रस्तुत करता है। जो कम पढ़ी–लिखी तथा निरक्षर होने के कारण परिवार और ससुराल में आए दिन अत्याचारों और उनके साथ हो रहे भेदभाव को सहन करती नज़र आती है। पहली पीढ़ी मुकदमेबाज, निर्लज्ज, क्रूर और बदचलन पति के अमानवीय व्यवहार को सहती, एक खुली सांस को तरसती और कुछ–कुछ मन के स्तर पर विद्रोहिनी अहल्या की मां वाली है। वहीं दूसरी पीढ़ी खुद अहल्या वाली है और तीसरी पीढ़ी ससुराल वालों द्वारा जिन्दा जला दी जाने वाली अहल्या की बड़ी बेटी आभा वाली है। तीनों पीढ़ियों की व्यथा के माध्यम से पुरुषों की भोगवादी मानसिकता पर व्यंग्य किया गया है। ग्रामांचल में पुरुषों में एकाधिकार की भावना के संस्कार होते

हैं उनके सामने नारी दबी हुई रहती है। नारी की घरबार की खुशी, शानौ–शौकत घूंघट के अंदर सिमटी रहती है। ऐसे ही चित्रण में पहली पीढ़ी की अहल्या की मां फूलो को देख सकते हैं।

विवेच्य उपन्यास में अहल्या की मां भी पति के आगे कुछ बोल नहीं पाती थी और न ही अपनी बात रख पाती थी। जिसका चित्रण अहल्या की इन पंक्तियों में स्पष्ट होता है – "मां डरी हुई चिड़िया की तरह प्रतीत होती थी। बेहद सख्त पर्दों में रहती थी मां।"[1] अहल्या की मां को अगर अपनी बात को पति तक पहुंचाना होता था तो अहल्या ही माध्यम बनती थी। अहल्या की मां अपने मायके में तो सबके साथ आत्मीयता, लगाव तथा खुशहाल जीवन व्यतीत करती है, पर ससुराल में उसका जीवन वैसा नहीं रहता है। उसे पितृसत्तात्मक सोच का सामना करना पड़ता है। जिसका वर्णन अहल्या द्वारा बोली गई इन पंक्तियों के माध्यम से प्रकट होता है – "आज भी मां के चारों तरफ बंधन–ही–बंधन हैं। उनके पैरों में बेड़ियां–ही–बेड़ियां हैं।"[2] आज फूलो (अहल्या की मां) मूक बनकर रह गयी है। जिसके लिए उसकी अपनी इच्छा–अनिच्छा का कोई मतलब नहीं है।

प्रस्तुत उपन्यास में अहल्या के पिता द्वारा पराई स्त्री का शोषण भी किया जाता है। फूलो (अहल्या की मां) को इस बात का ज्ञात होने पर वह विरोध प्रकट करना चाहती है। जाने अनजाने विरोध प्रकट भी किया गया जिसका परिणाम कुछ इस प्रकार हुआ। जिसका चित्रण इन पंक्तियों में मिलता है – "पूरा परिवार मां की चीख और लाठी से पीटे जाने की आवाज़ से जग गया था ... बाबूजी कितने क्रूर थे, और कितने निर्मम। .. . बीमार मां को तब तक पीटते रहे जब तक मां का रोना–चीखना बंद नहीं हो गया।"[3] नारी दबकर रहे, आवाज न उठाए इसलिए उसे मारा–पीटा जाता है। अहल्या की मां जीवन भर पति के अत्याचार को सहती रही कभी न अपने लिए न ही बेटी के लिए कोई आवाज़ उठा सकी। बस घुट–घुट कर अपना जीवन व्यतीत करती रही।

भारतीय संस्कृति में विवाह एक संस्कार है जिसमें पति–पत्नी एक–दूसरे से अलग न होने के लिए एक पवित्र बंधन में बंधे जाते हैं, वे धर्म, अर्थ और काम में अतिचार न करते हुए एक–दूसरे का साथ देते हैं। यदि पति कुटिल, कठोर, निर्मोही और पाशविक वृत्ति का निकले तो भी पति का साथ ग्रामीण नारी देती है। विवेच्य उपन्यास में भी अहल्या का पति कृष्णकांत कुटिल, कठोर है फिर भी पतिपरायण अहल्या पति के लिए अपना सर्वस्व अर्पित करती है। यह जानते हुए भी कि उसका पति शहर में दूसरी शादी कर चुका है और उसकी एक बच्ची भी है। वह फिर भी अपना पत्नी धर्म निभाती है जिसका स्पष्ट चित्रण इन पंक्तियों द्वारा होता है – "अहल्या (लालबहू) आज भी अपनी मांग भरती है। बालों को कंधे से संवारने के बाद जूड़ा बांधती है तो अनचाहे ढंग से यह भी सोच जाती है कि मांग सूनी क्यों रहे? और चुटकी भर सिंदुर उसी तरह मांग में भर लेती है, जैसे भूख न रहने पर भी जीने के लिए जबरन कुछ खा लेना पड़ता है।"[4]

ग्रामांचलिक नारी पति को अपना परमेश्वर मानती है। यही नहीं जब कोर्ट में कृष्णकान्त पर मुकद्धमा चलता है तब भी अहल्या कृष्णकान्त की दूसरी पत्नी की बेटी को अपनी बेटी कहती है – "हां, नेहा मेरी बेटी है। पिता के साथ रहकर पढ़ती हैं।" "... नेहा मेरी ही कोख की जन्मी है। मेरी बेटी ...।"[5] वह सही गलत की परवाह किए बिना अपने पति का साथ निभाती जाती है। अहल्या परित्यक्ता नारी है। जो पति के द्वारा त्यागी गई है। वह पति के साथ नहीं रहती है। बल्कि गांव में रहती है। कृष्णकांत आज शहर में एलाइड सर्विस के सम्मानित पद पर कार्यरत हैं। कृष्णकांत इतना स्वार्थी हो गया है वह अपनी नौकरी बचाने के लिए दूसरी शादी ही नहीं करता है, साथ ही अहल्या को अब सिर्फ एक देहाती औरत ही समझता है। जिसके साथ वह गांव में नहीं रह सकता है। जिसका स्पष्ट चित्रण कृष्णकांत की पंक्तियों में मिलता है – "अपनी देहाती पत्नी पर सोचना ऐसा लगता था जैसे महल के खूबसूरत गलीचे से उतरने के बाद पैर सीधे कूड़े–कचरे पर आ गया हो। मात्र साक्षर होने की सीमा तक पहुंची पत्नी जो शहरी संपर्क से सर्वथा अपरिचित रही, गांव में पली–बढ़ी, वह भला क्या सहयोग कर सकती है जिंदगी में ।"[6] अहल्या के कम पढ़े–लिखे और गांव की होने के कारण कृष्णकांत उसे त्याग देता है। उसका मानना है कि अहल्या गांव की है। इसलिए वह कभी भी कृष्णकांत को समझ नहीं पाएगी।

प्रस्तुत उपन्यास में लड़के–लड़की के भेदभाव को भी दर्शाया गया है। अहल्या के जन्म को लेकर बड़ी बातें हुई थी अहल्या के पिता को लड़की नहीं लड़का चाहिए था। अहल्या के जन्म की सूचना पाते ही उसके पिता दालान में सो गये थे। अहल्या से तो जन्म के साथ ही भेदभाव होता नज़र आता है। जब अहल्या की बुआ ने कहा था कि जिस बच्ची का जन्म हुआ है वह बहुत कमज़ोर है और दूध नहीं पी रही है। तो बाबूजी द्वारा बोले गए शब्द लड़के–लड़की के भेदभाव को दर्शाते हैं – "मर जाने दो। लड़की को जिंदा रखकर क्या होगा? बेकार की परेशानी और खर्च।"[7] लेकिन अहल्या मरती हुई भी जी गयी थी। अहल्या की पढ़ाई को लेकर भी उसके साथ पक्षपात होता नज़र आता है। अहल्या पढ़ाई में परिश्रमी है, हेडमास्टर उसकी पढ़ाई पर प्रसन्न होकर उसके पिता के साथ प्रशंसा करते हैं। फिर भी अहल्या के पिता पर इस बात का कुछ असर नहीं पड़ता है। वह अपनी पितृसतात्मक सोच को कायम रखते हैं, उनके अनुसार लड़को को ही पढ़ाना चाहिए। जिसका चित्रण इन पंक्तियों में मिलता है – "अरे, लड़कियों को पढ़ाकर क्या होगा हेडमास्टर साहब! पराया धन ...। अपने घर चली जायेंगी। किस्सा खतम। लड़का तो अपना धन है। पढ़ाइये लड़को को। परिवार का सहारा होगा।"[8] अहल्या के पिता का मानना है कि जो सुख लड़का दे सकता है। वह लड़की कभी नहीं दे सकती। वह तो पराए घर के लिए ही बनी है। उसकी पढ़ाई–लिखाई से क्या होगा? गांवों में नारी की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है।

दहेज की कमी के कारण भारत में महिलाओं को हर वर्ष जलाया जाता है। विवेच्य उपन्यास में भी तीसरी पीढ़ी अहल्या की बेटी आभा का चित्रण मिलता है। जिसे भी दहेज के लालच में ससुराल वालों द्वारा जिंदा जला दिया जाता है। जिसका चित्रण इन पंक्तियों द्वारा स्पष्ट होता है – "तीन या चार महीने बाद उसकी ससुराल से खबर आयी कि स्टोव से आग लग जाने के कारण आभा जलकर मर गयी ... आभा की ससुराल से संपर्कित कुछ लोगों का कहना है कि योजनाबद्ध ढंग से आभा को जलाया गया है।"[9] दहेज न मिलने के कारण ससुराल वालों ने खुद आभा को जलाया था। अब उसकी मृत्यु पर तरह–तरह की मनगढ़त कहानियां बनायी जा रही थी। आज के समय में भी न जाने कितनी स्त्रियों को दहेज की कमी के कारण मृत्यु को अपनाना पड़ता है।

इन तीनों स्त्रियों के अतिरिक्त एक स्त्री ऐसी भी है जो पति के साथ प्यार भी करती है और झगड़ा भी करती नज़र आती है। दुलरिया की मां एक ऐसी जीवन्त औरत है, जो अपने पति के साथ जांघतोड़ काम भी करती है तो कभी जमकर झगड़ा भी करती है। पति की प्रताड़ना के एवज में प्रताड़ना भी देती है, मगर टूटकर प्यार भी करती है। दुलरिया की मां के ऐसे व्यवहार में छोटी जात की प्रकृति खोजने वाली इज्जतदार औरतों के लिए उसका यह कथन वस्तुतः एक चुनौती सा है – "इज्जत आप लोगों के लिए है। हम लोग तो एकदम सड़के के आदमी। ... जी लगेगा तो रहेंगी अपने घरवाले के साथ ... सतायेगा तो हम भी सतायेंगी। ... बोली सहती हैं वह जो सात पर्दों में रहती हैं, हम क्यों सहें किसी की धौंस?"[10] और इस चुनौती का आधार निर्द्वन्द्व विश्वास का पुख्तापन लिए वह जमीन है जो आखिरकार लूटी–पीटी थकी–हारी अहल्या के मन में अभिलाषा जगाती है। "दुलरिया की मां मुझे बार–बार याद आती रहती है। बार–बार मुंह चिढ़ाती रही है वह मानो कह रही हो कि बंधी रहो तुम लोग सात पर्दों में, ढोती रहो बाबू साहब खानदान की मर्यादा घुट–घुटकर जीती रहो, लेकिन जिंदगी यहां है, यहां है। गरीब–मजदूर सही, लेकिन जिंदगी यहां है ...।"[11]

विवेच्य उपन्यास में दुलरिया की मां ही विद्रोही रूप में नज़र आती है। जो अपने हक के खिलाफ सिर्फ आवाज उठाना ही नहीं जानती बल्कि जीवन की हर एक परिस्थिति का डटकर मुकाबला भी करती है। जो अहल्या जैसी औरतों के लिए एक सशक्त उदाहरण है कि हमें चुपचाप बैठने से कुछ हासिल नहीं होगा बल्कि अपने खिलाफ हर उठती हुई आवाज़ को रोकना होगा। तभी महिलाएं अपने अधिकारों के प्रति जागरुक होंगी।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि महिलाएं परिवार समाज व देश की प्रगति की नींव है और नींव को सशक्त व मजबूत बनाये जाने पर ही सुदृढ़, विशाल एवं भव्य इमारत की कल्पना को साकार किया जा सकता है। ग्रामीण नारी की दुर्दशा का सबसे बड़ा कारण शिक्षा का अभाव है। जिसके कारण परम्परागत रूढ़िग्रस्त मान्यताओं पर 'कोल्हू के बैल' की भांति आँखों पर पट्टी बाँधकर चली जा रही है। वर्तमान समय

में स्त्रियों की शिक्षा बढ़ी है। किन्तु पुरुषों की तुलना में स्त्रियों को पढ़ाया जाना सभी वर्ग, समुदाय, जातियों, अंचलों में अपेक्षाकृत बहुत कम है। शिक्षा की कमी के कारण स्त्रियों को जीवन संग्राम की व्यापक समझ का भी अभाव रहता है। नारी के लिए आवश्यक है कि वह समाज में अधिक से अधिक शिक्षित होकर और अपने अधिकारों के प्रति जागरुक होकर अपनी अस्मिता का बनाने में सक्षम हो तभी वह समाज में निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर होती हुई नजर आएगी।

सन्दर्भ

1. रामधारी सिंह दिवाकर, पंचमी तत्पुरुष, पृ. – 21
2. वही, वही, पृ. – 35
3. वही, वही, पृ. – 23–24
4. वही, वही, पृ. – 6
5. वही, वही, पृ. – 1
6. वही, वही, पृ. – 110
7. वही, वही, पृ. – 20
8. वही, वही, पृ. – 28
9. वही, वही, पृ. – 172
10. वही, वही, पृ. – 63
11. वही, वही, पृ. – 181